नाम : डॉ लोकेश्वर प्रसाद सिन्हा

महाविद्यालय का नाम : दुर्गा महाविद्यालय रायपुर *(छ.ग.)*

संकाय : कला

पद नाम : सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग

विषय :प्रेमचंद के उपन्यास 'गोदान' में भारतीय किसान

दिनांक :18/07/2023

प्रेमचंद के उपन्यास 'गोदान' में भारतीय किसान

भारत हमेशा से एक कृषि प्रधान देश रहा है। यहाँ की अधिकांश आबादी गाँवों में निवास करती है और इन ग्राम वासियों का प्रधान कार्य कृषि है, इनकी अजीविका का प्रमुख जरिया खेती–किसानी ही है। इसीलिए भारतीय अर्थव्यवस्था को कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था कहा जाता है। कृषि प्राचीन काल से भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार रही है, इसके प्रारंभिक प्रमाण हमें वेदों में वर्णित मिलते हैं। तब से लेकर आज तक की आधुनिक औद्योगिक सभ्यता में भी खेती–किसानी एक बड़ा व्यवसाय है और इसकी महत्ता लगातार बनी हुई है। देश की आवादी का एक बड़ा हिस्सा जिसे हम किसान कहते हैं, इस कार्य को करने में सदियों से लगा हुआ है भारत की आत्मा में बसने वाले इन किसानों का जीवन हमेशा से साहित्यकारों, कलाकारों और बुद्धिजीवियों के अध्ययन, विवेचन, विश्लेषण और शोध का विषय रहा है। हिन्दी साहित्य में भी विभिन्न कालक्रमों में विभिन्न विधाओं में किसान जीवन का चित्रण मिलता है। कविता, उपन्यास और कहानी में इसे ज्यादा 'स्पेस' मिलता है। हिन्दी साहित्य में प्रेमचंद पहले लेखक हैं जिन्होने किसानों को केन्द्र में रखकर साहित्य की रचना की। इसलिए डॉ. रामविलास शर्मा जब प्रेमचंद को 'अद्वितीय उपन्यासकार' कहते हैं तो उसके पीछे ठोस कारण हैं। प्रेमचंद की एक बहुत बड़ी विशेषता है कि किसान को वह रंगमंच के केन्द्र में रखते हैं। प्रेमचंद का वैशिष्ट्य इस बात में है कि उन्होनें पहली बार किसानों के जीवन को भीतर से देखा और उनकी पीड़ा को, उनके हास्य–रूदन को, उनकी गरीबी उनके सीधेपन को और चतुराई को अपने उपन्यासों में सजीव ढंग से चित्रित किया तभी तो उन्होने होरी को व्यक्ति चरित्र से 'वर्ग चरित्र' बना दिया। प्रेमचंद ने समूचे कृषक जीवन का चित्रण महाकात्यात्मक स्तर पर किया। प्रेमचंद की परंपरा को आगे ले जाने वाले उपन्यासकारों में नागार्जुन, भैरव प्रसाद गुप्ता, फणीश्वर नाथ रेणु, राही मासूम रजा, श्रीलाल शुक्ल, विवेकीराय, भगवानदास मोरवाल, वीरेन्द्र जैन, राजू शर्मा आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त कहानीकारों और

कवियों ने भी किसान, जीवन की त्रासदियों को अपनी रचनाओं में उकेरा है। आज स्थिति कुछ बदली हुई सी और भयावह है। आज खेती–किसानी और किसान, दोनों संकट के दौर से गुजर रहे हैं। किसान लगातार आत्महत्या करते जा रहे हैं। ऐसे समय में जब देश की बहुसंख्य आबादी की सामाजिक संरचना छिन्न भिन्न हो चुकी है। किसान तबाही के कगार पर खड़ा है। साहित्य में किसानों की त्रासदी से दूरी आज चिंता का विषय है, आज साहित्य के ज्यादातर विषय शहरी वर्ग से लिए जाते हैं। वहाँ भूख और खेती किसानी का संकट कोई मायने नही रखता अर्थात आज धीरे–धीरे किसान सहित्य से गायब हो रहा है। ऐसे समय में हिन्दी साहित्य में किसान सपने, संघर्ष, चुनौतियाँ और 21 वीं सदी' विषय पर विमर्श की आवश्यकता है। वस्तुतः किसी भी महत्वपूर्ण विषय और मुद्दे को लगातार मूल्यांकन पुनर्मूल्यांकन होना चाहिए। प्रस्तुत राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी 'हिन्दी साहित्य में किसान सपने, संघर्ष, चुनौतियाँ और 21वीं सदी' हिन्दी साहित्य में किसान जीवन की स्थितियों की पड़ताल की दिशा में एक विनम्र प्रयास है।

'गोदान' उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द द्वारा लिखा गया वह उपन्यास है जिसे कृषक जीवन का महाकाव्य कहा गया है। इस उपन्यास की रचना 1935 ई. में की गई थी। गोदान से पूर्व प्रेमचन्द जी 'प्रेमाश्रम' की रचना कर चुके थे जिसमें जमींदारों द्वारा किसानों के शोषण का उल्लेख था। 'प्रेमाश्रम' को गोदान की पूर्व पीठिका कहा जा सकता है। प्रेमचन्द के लेखन का सरोकार ग्रामीण जीवन विशेषकर कृषक वर्ग से था। वे उनकी पीड़ा, शोषण, कठिनाइयों से भली–भांति अवगत थे और चाहते थे कि जमींदारी प्रथा समाप्त हो जो किसानों के शोषण के लिए बहुत कुछ उत्तरदायी थी। अपने एक आलेख में प्रेमचन्द ने लिखा है।

गोदान में प्रेमचंद ने 'होरी' के रूप में जिस चरित्र की परिकल्पना की है वह अपने 'वर्ग' का प्रतिनिधित्व करता है सभी किसानों की हालत कमोवेश होरी जैसी ही है। अवध क्षेत्र के 'बेलारी गांव का 'होरी' पांच बीघे जमीन का मालिक एक सामान्य कृषक है और सबका 'नरम चारा' है। जमींदार, पटवारी, सूदखोर

महाजन, पुलिस, बिरादरी तथा धर्म के ठेकेदार सब उसका शोषण करते हैं और अन्ततः शोषण का शिकार होरी किसान से मजदूर बनने को विवश हो जाता है।

गोदान की रचना कृषक जीवन से जुड़ी समस्याओं का चित्रण करने के लिए की गई है।

यह भी विडम्बना ही है कि अपने शोषकों के बारे में होरी जैसा किसान अच्छी तरह जानता है, फिर भी रूढ़ियों और संस्कारों से बंधा हुआ होने के कारण वह उनके प्रति क्रोधाभिभूत नहीं हो पाता और इस शोषण के लिए वह अपने भाग्य को दोषी मानता है।

किसानों के शोषण का एक बहुत बड़ा कारण है उनकी रूढ़िवादिता और संगठन का अभाव। वे एक–दूसरे से ईर्ष्या करते हैं और इसलिए बैल की तरह जमींदारों के हल में जुते रहते हैं।

डॉ. रामविलास शर्मा की मान्यता है कि गोदान की मुख्य समस्या 'ऋण' या कर्ज है। पूरे देश का किसान महाजनी सभ्यता में जकड़ा हुआ है जिसे गोदान में एक प्रहसन के माध्यम से अभिव्यक्ति दी गई है।

किसान को अपनी 'मरजाद' (मर्यादा, इज्जत) की चिन्ता बहुत रहती है। इसका मोह वह त्याग नहीं पाता। भले ही किसानी से कुछ न मिलता हो, किन्तु इससे 'मरजाद' तो रहती है। मजूरी में वह 'मरजाद नहीं है इसलिए होरी से खेती नहीं छोड़ी जाती। होरी को 'बिरादरी' की चिन्ता भी है। वह बिरादरी से बाहर नहीं रह सकता।

'बिरादरी' का यह मोह पुराने रूढ़िवादी मूल्यों की जकड़ है जिसमें 'होरी' फंसा हुआ है। इसने उसे इतना भयभीत कर रखा है कि निरपराध होने पर भी 'झुनिया को अपनी पुत्रवधू के रूप में स्वीकारने पर वह बिरादरी द्वारा दिए गए दण्ड को स्वीकार कर लेता है।

कैसी विडम्बना है कि भारत का किसान अपनी एक छोटी–सी इच्छा को पूरा नहीं कर पाता। होरी के मन में एक गाय की इच्छा थी। यह 'गाय' उसका 'स्टेटस सिम्बल' है। घर के द्वार पर गाय बंधी होगी तभी तो लड़के के ब्याह वाले आएंगे और लोग पूछेगे कि यह किसका घर है। गाय से वह अपने मान–सम्मान की वृद्धि करना चाहता है। संयोग से उसे भोला की गाय उधार में। मिल भी जाती है, किन्तु उसके भाई हीरा की ईर्ष्या भड़क उठती है और वह गाय को जहर दे देता है। गाय के मर जाने से होरी के जीवन का विषाद और भी गहरा हो जाता है। इस गाय ने उसके जीवन को कई रूपों में प्रभावित किया था। इसके लिए वह कर्जदार वना, झुनिया और गोवर का मेल हुआ जिससे उसे सामाजिक दण्ड भुगतना पड़ा, भोला उसके बैल खोल ले गया और उसे किसान से मजदूर बनना पड़ा। अन्त तक वह 'गाय' की अपनी इच्छा पूरी नहीं कर सका और अब जीवन की अन्तिम बेला में उससे 'गोदान' की अपेक्षा की जा रही है। धनिया आज मजदूरी में मिले पैसों को होरी के ठण्डे हाथ पर रखकर पण्डित दातादीन को देती हुई कहती है, ''महाराज घर में गाय है न बछिया, न पैसा। यही पैसे हैं, यही इनका गोदान है।''

उक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रेमचन्द ने गोदान में कृषक जीवन का यथार्थ चित्रण किया है।

प्रेमचंद ऐसे प्रथम भारतीय उपन्यासकार हैं जिन्होंने उपन्यासों का उपयोग समाज और जीवन की आलोचना के लिए किया है। उन्होंने अपने उपन्यासों में उन समस्याओं को चित्रित किया है जो वर्तमान युग से जुड़ी हुई हैं और जिन्हें हर व्यक्ति अनुभव करता है। प्रेमचन्द एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे जहां भेद–भाव के अभिशाप से मानवता पीड़ित न हो, किसी प्रकार का शोषण न हो और आदमी की पहचान सम्पत्ति और जाति के पैमाने से न हो। गोदान में उनका यही उद्देश्य प्रमुखता से व्यक्त हुआ है। इस उपन्यास का प्रधान उद्देश्य है कृषक जीवन की समस्याओं का चित्रण करना, उसके शोषण का चित्र प्रस्तुत

करना और उसकी दीन–हीन स्थिति से समाज को परिचित कराना। किसान का शोषण कौन करता है। तथा उसका शोषण कितने मुहानों पर होता है और उस शोषण के लिए समाज के कौन–कौन लोग उत्तरदायी हैं – इसका सजीव चित्रण गोदान में किया गया है। उपन्यास मनोरंजन की वस्तु नहीं है अपितु वह जीवन की सच्चाइयों को उजागर कर हमें सोचने–विचारने को विवश करता है और संघर्ष की प्रेरणा प्रदान करता है। अपने उपन्यासों के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए प्रेमचंद लिखते हैं, **"हम साहित्य को मनोरंजन और विलासिता की वस्तु नहीं समझते। हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा जिसमें चित्रण की स्वाधीनता का भाव हो, सौंदर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाई का प्रकाश हो, जो हममें गति, संघर्ष और बेचौनी पैदा करे, सुलावे नहीं।"**

कृषक जीवन की विसंगतियों का चित्रण–गोदान की रचना कृषक जीवन से जुड़ी हुई समस्याओं का चित्रण करने के लिए की गयी है। होरी, कृषक वर्ग का प्रतिनिधि पात्र है उसके–जीवन की 'ट्रेजडी' हर किसान के जीवन को प्रस्तुत करती है।

जब भारत में जमींदारी प्रथा थी तो किसान उनके शिकंजे में कसा हुआ था। जमींदार, कारकुन पटवारी, सूदखोर महाजन आदि तो उसका शोषण करते ही हैं, इनके अतिरिक्त पुलिस, व्यापारी, धर्म के ठेकेदार, समाज के ठेकेदार भी उसका शोषण करते हैं। यह कैसा विरोधाभास है कि जो किसान सारे संसार के लिए अन्न उपजाता है वही खुद भूखा है। यह भी विडम्बना ही है कि अपने शोषकों के बारे में होरी जैसा किसान अच्छी तरह जानता है फिर भी, रूढ़ियों और संस्कारों से बंधा हुआ होने के कारण वह उनके प्रति क्रोधाभिभूत नहीं हो पाता, इस शोषण के लिए वह अपने भाग्य को दोषी मानता है। गोबर को समझाता हुआ वह कहता है, "छोटे–बड़े भगवान के घर से बन कर आते हैं। सम्पत्ति बड़ी तपस्या से मिलती है उन्होंने, पूर्वजन्म में जैसे कर्म किये. हैं उनका आनन्द भोग रहे हैं। हमने कुछ नहीं संचा तो भोगे क्या?'' किन्तु, गोबर उसकी इस बात से सहमत नहीं है वह

प्रगतिशील चेतना का प्रतीक है और इस बात को जानता है कि भगवान तो सबको बराबर बनाते हैं। यहां जिसके हाथ में लाठी है वह गरीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता है।''

किसानों के इस शोषण का कारण है उनके संस्कार, रूढ़िवादिता और संगठन का अभाव। वे एक दूसरे से ईर्ष्या करते हैं और इसीलिए बैल की तरह जमींदारों के हल में जुते रहते हैं, भोला इस विषय में होरी से कहता है, "कौन कहता है हम तुम आदमी हैं। हममें आदमियत कहां। आदमी वह है जिसके पास धन है, अख्तियार है, इल्म है। हम लोग तो बैल हैं और जुतने के लिए पैदा हुए हैं। उस पर एक–दूसरे को देख नहीं सकते। एका का नाम नहीं। एक किसान दूसरे के खेत पर न चढ़े तो कोई जाफा कैसे करे, प्रेम तो संसार से उठ गया।''

जमींदार को किसान से लगान वसूल करने का जायज हक है, किन्तु वे नाजायज रूप में नजराना लेते हैं, जुर्माना वसूल करते हैं, इजाफा लगान लेते हैं और किसानों से बेगार कराते हैं। रायसाहब अमरपाल सिंह वैसे तो किसानों के शुभेच्छु बनते हैं किन्तु स्वार्थ नहीं छोड़ सकते उनकी कथनी और करनी की पोल खोलते हुए प्रो. मेहता कहते हैं, "यदि आप कृषकों के शुभेच्छु हैं और आप की धारणा है कि कृषकों के साथ रियायत होनी चाहिए तो पहले आप खुद शुरू करें, काश्तकारों को बगैर नजराने लिए पढ़े लिखें, बेगार बन्द कर दें, इजाफा लगान को तिलांजलि दे दें, चरावर जमीन छोड़ दें।''

रायसाहब के साथ मेहता जी की सम्पूर्ण बहस यह ध्वनित करती है कि बुद्धिजीवी लोग ही रायसाहब जैसे रँगे सियारों की वास्तविकता से अच्छी तरह से परिचित है। शहर के मेहता और गांव के गोबर जैसे लोग ही इस शोषण के विरुद्ध आवाज उठाकर समाज को इस अभिशाप से मुक्ति दिला सकते है।

शोषण के विविध रूपों का चित्रण किसान का शोषण जमींदार तो करता ही है किन्तु इस शोषण चक्र में और भी कई लोग शामिल हैं। गांव के महाजन और

साहूकार भी किसान की मजबूरी का लाभ उठाकर ऊंची दर पर ब्याज वसूल करते हैं। साहूकार के सूद की दर एक आना रुपया से लेकर दो आना रुपया तक है जो 75 प्रतिशत वार्षिक से 150 प्रतिशत तक जा पहुंचती है, किन्तु, किसान मजबूर है कर्ज लेने को विवश है। कभी खाद के लिए, कभी वीज के लिए, कभी बैल के लिए तो कभी लगान चुकाने के लिए, तो कभी सामाजिक दण्ड की भरपाई के लिए। होरी कहता है, "कितना चाहता हूं कि किसी से एक पैसा कर्ज न लें लेकिन, हर तरह का कष्ट उठाने पर भी गला नहीं छूटता।''

सच तो यह है कि कर्ज वह मेहमान है जो एक बार आकर फिर जाने का नाम नहीं लेता। होरी को लगता है कि इसी तरह उस पर कर्ज का सूद बढ़ता जाएगा और एक दिन उसका घर द्वार सब नीलाम हो जाएगा और उसके बच्चे निराश्रित होकर भीख मांगते फिरेंगे। अगर सन्तोष था तो यही कि वह विपत्ति अकेले उसी तरह के सिर न थी प्रायः सभी किसानों का यही हाल था।

जमींदार के कर्मचारी, कारकुन, कारिन्दा तथा सरकार के पटवारी आदि भी किसान का शोषण करते हैं। पुलिस के गण्डासिंह जैसे थानेदारों की मिलीभगत से गांव के मुखिया भी किसान से मिली रिश्वत के पैसो में अपना हाथ बंटाते हैं।

समाज और धर्म भी किसान का शोषण करने में पीछे नहीं हैं। झुनिया को घर में आश्रय देने पर गांव के भाग्यविधाताओं ने 100 रु. दण्ड और तीस मन अनाज जुर्माने के रूप में वसूल किया। दातादीन जैसे धर्म के ठेकेदार भी किसान का शोषण करते हैं। मृत्यु के अवसर पर होरी से गोदान की अपेक्षा करने वाले ये तथाकथित धर्म के ठेकेदार समाज के मुंह पर तमाचा मारते हुए से प्रतीत होते हैं। जो व्यक्ति जीवन पर्यन्त एक गाय का जुगाड़ अपने लिए नहीं कर सका उससे मरते समय गोदान के लिए कहना कहां का न्याय है पर दातादीन को इससे क्या?

गोदान में प्रेमचन्द जी ने पूंजीवादी व्यवस्था को समाप्त करने का संकल्प व्यक्त किया है। खन्ना पूंजीपतियों के प्रतिनिधि पात्र हैं। शोषण की प्रक्रिया नगर

और गांव में समान्तर रूप से चलती है। गांव में जमींदार किसान का शोषण करता है तो नगर में मिल मालिक और पूंजीपति मजदूर का शोषण करके अपनी सोने की लंका खड़ी करते हैं।

प्रेमचन्द को यह स्पष्ट दीख रहा था कि यह शोषण अब अधिक दिनों तक चलने वाला नहीं। रायसाहब को भी इसका आभास हो गया था कि जमींदारी प्रथा अब समाप्त होने वाली है वे कहते हैं– **"लक्षण कह रहे हैं कि बहुत जल्द हमारे वर्ग की हस्ती मिट जाने वाली है।"** मजदूर अपने पेट के अतिरिक्त और किसी बात पर ध्यान नहीं देता, परन्तु जब पर्याप्त परिश्रम के बाद भी उनका पेट खाली रहता है तो वे विद्रोह पर उतर आते हैं। मिल मालिक खन्ना अपने अहंकार में मजदूरों की उचित द्य मांगों को भी ठुकरा देते हैं, परिणामतः हड़ताल होती है और द्य मजदूर खन्ना की मिल में आग लगा देते हैं। शायद 'गोदान' तक आते–आते प्रेमचन्द यह समझने लगे थे कि गांधीवादी अंहिसा से शोषण को समाप्त नहीं किया जा सकता उसके लिए तो विद्रोही तेवर अपनाने ही पड़ेंगे। प्रेमचन्द जी ने यह भी सन्देश दिया है कि पूंजी पर अहंकार करना ठीक नहीं, क्योंकि पूंजी क्षणभंगुर होती है। खन्ना की पत्नी गोविन्दी खन्ना सात्विक विचारों की महिला है वह इस आर्थिक हानि पर दुखी नहीं रहती अपितु उसे वरदान मानती हुई कहती है।

"जीवन का सुख दूसरों को सुखी करने में है, उन्हें लूटने में नहीं। मेरे विचार से तो पीड़क होने से पीड़ित होना कहीं श्रेष्ठ है। धन खोकर अगर हम अपनी आत्मा को पा सके तो यह कोई महंगा सौदा नहीं है।"

प्रेमचन्द जी ने गोदान में सेवा का आदर्श प्रस्तुत करते हुए जो विचार उपस्थित किए हैं वे लोक कल्याण की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी हैं। दौलत से आदमी को जो सम्मान मिलता है वह उसका सम्मान नहीं है, उसकी दौलत का सम्मान है। सच तो यह है कि दौलत व्यक्ति में अहंकार उत्पन्न करती है और उसके हृदय से सेवा, करुणा जैसी सदुवृत्तियां समाप्त हो जाती हैं। प्रेमचन्द जी ने

गोदान के पात्रों के माध्यम से सेवा के महत्व को प्रतिपादित किया है। सेवा और परोपकार में मेहता जी का दृढ़ विश्वास है, मालती भी उन्हीं की प्रेरणा से अपने स्वभाव को बदल लेती है अब उसमें आश्चर्यजनक परिवर्तन आ गया है। गरीबों को बिना फीस लिए दवा देती है। वह सेवा का आदर्श प्रस्तुत करती है। प्रेमचन्द जी सेवा को कर्मयोग कहते हैं। मेहता जी के माध्यम से अपने विचार व्यक्त करते हुए वे कहते हैं – **"प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों के बीच में जो सेवा मार्ग है, चाहे उसे कर्म योग ही कहो, वही जीवन को सार्थक कर सकता है, वही जीवन को ऊंचा और पवित्र बना सकता है।"** नारी को भी अपने व्यक्तिगत जीवन में सेवा धर्म अपनाने का सुझाव देते हुए वे कहते हैं– **"सच्चा आनन्द, सच्ची शान्ति केवल सेवाव्रत में है। वही अधिकार का स्त्रोत है वही शक्ति का उद्‌गम है। सेवा ही वह सीमेन्ट है जो दम्पति को जीवन पर्यन्त स्नेह और साहचर्य से जोड़े रख सकता है, जिस पर बड़े–बड़े आघातों का कोई असर नहीं होता। जहां सेवा का अभाव है वहीं विवाह–विच्छेद है, परित्याग है, अविश्वास है।"**

संदर्भ ग्रंथ –

1. प्रेमचंद – गोदान मनोज पब्लिकेशन्स संस्करण 2005
2. डॉ. राम विलास शर्मा – प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली
3. सरिता राय – उपन्यासकार प्रेमचंद की सामाजिक चिंता – वाणी प्रकाशन
4. वागर्च – दिसम्बर 2005
5. अन्टरा – जनवरी – फरवरी 2012
6. समकालीन साहित्य समाचार : अक्टूबर 2014